ग्यल–स्रस–थोग्स–मेद रचित
बोधिसत्वों के सैंतीस अभ्यास

नमो लोकेश्वराय

जिन्होंने समस्त धर्मों के आगमन एवं निर्गमन के अभाव का साक्षात्कार कर लिया है, फिर भी जीवों के हितार्थ निरंन्तर परिश्रम करते रहते हैं,उस गुरुवर तथा अवलोकितेश्वर के चरणों में,मैं तीनों द्वारों से सदा सादर प्रणाम करता हूँ।।1।।

सुख एवं अनुशंसा के श्रोतस्थान सम्बुद्धों का आविर्भाव सद्धर्म की साधना से ही होता है। वह भी उसे अभ्यास कराने वाले ज्ञान की अपेक्षा से होता है। अतः जिनपुत्रों अभ्यास को बताने जा रहा हूँ।।2।।

स्व और पर दोनों के संसार सागर से उद्वार हेतु दुर्लभ क्षणसम्पत्ति रूपी नाव प्राप्त है तो इस अवसर में बिना किसी आलस्य के दिन रात सद्धर्म का श्रवण,मनन और भावना करना जिनपुत्रों का अभ्यास है।।3।।

बन्धुओं के प्रति जल प्रवाह के समान राग का प्रचलन,शत्रुओं के प्रति अग्नि की तरह प्रज्वलित क्रोध और समस्त हेय–उपदेयता को भूलकर मोहरूपी अंधकार से युक्त जन्मभूमि को त्याग करना जिनपुत्रों का अभ्यास है।।4।।

दूषित स्थान को त्याग देने से क्रमशः क्लेष घट जाता है। चित्त में विक्षेप न रहने से कुशल कर्मों से मन का योग स्वतः बढ़ जाता है। चित्त के प्रसन्न रहने या होने से धर्म में निश्चय का लाभ होता है। अतः विवके का उपयोग करना जिनपुत्रों का अभ्यास है।।5 ।।

लम्बे समय तक साथ रहने के बाद प्रिय तथा मित्रों से विछड़ जाते हैं। यत्न पूर्वक अर्जित धन–वस्तुऐं पीछे छूट जाती हैं, मेहमान रूपी विज्ञान, शरीर रूपी अतिथिशाला को छोड़ देता है। इस प्रकार की स्थिति को देखते हुए ऐहिकता की बुद्धि को त्याग देना जिनपुत्रों का अभ्यास है।।6।।

जिनकी संगति से त्रिविध विष की वृद्धि होती है और श्रवण, मनन और भावना का पतन होता है,मैत्री करुणा अवरुद्ध हो जाती है ऐसे दुष्ट मित्रों का परित्याग करना जिनपुत्रों का अभ्यास है।।7।।

जिनकी संगति करने पर क्रमशः दोषों का क्षय होने लगता है, शुक्लपक्ष के चन्द्रमा के समान अच्छे गुणों की वृद्धि होने लगती है, उस तरह के कल्याण मित्रों को शरीर से भी अधिक प्रिय रूप में ग्रहण करना जिनपुत्रों का अभ्यास है।।8।।

स्वयं संसार के कारागार में फसे लौकिक देवताओं द्वारा किस का उद्वार हो सकता है। अतः जिनके शरण में जाने पर कभी धोखा नहीं हो सकता उस त्रिरत्न की शरण में जाना जिनपुत्रों का अभ्यास है।।9।।

अत्यन्त असहनीय दुर्गतियों का दुःख पाप कर्मों का ही फल है ऐसा तथागत ने कहा है।अतएव प्राण छूट भी जाऐ तो भी पाप कर्मों का न करना जिनपुत्रों का अभ्यास है।।10।।

तीनों भवों का सुख तिनके की नोंक में स्थित ओस के समान क्षणिक एवं विनाशशील है। कदापि विकृत ने होने वाले परम निर्वाण पद का अर्थी होना करना जिनपुत्रों का अभ्यास है।।11।।

अनादि काल से हमारे प्रति स्नेह रखने वाली माताऐं दुखी हैं तो स्वयं के सुख से हमें क्या लाभ? अतः अप्रमेय सत्वों की मुक्ति हेतु बोधिचित्त का उत्पाद करना जिनपुत्रों का अभ्यास है।।12।।

संसारिक दुखों का उद्भव आत्मा रूपी तृष्णा से होता है। सम्यक् सम्बुद्धत्व की प्राप्ति परहित चिन्तन से होता है। ऐसी स्थिति में अपने सुखों का एवं पर के दुखों का सुविनियोग करना जिनपुत्रों का अभ्यास है।।13।।

अत्यधिक लोभवश कोई व्यक्ति हमारे सारे धन सम्पत्तियों का अपहरण कर लेता है या अपहरण कराता है तो भी त्रैकालिक पुण्यों के साथ शरीर तक समस्त भोग्य वस्तुओं को उन अपहरण कर्ताओं के लिए समर्पित करना जिनपुत्रों का अभ्यास है।।14।।

अपने में अल्पमात्र भी दोष न रहे, फिर भी कोई हमारा सिर तक काटने के लिए तत्पर हो जाए तो भी करुणावश उन लोगों के पापों को अपने ऊपर ले लेना जिनपुत्रों का अभ्यास है।।15।।

कुछ लोग नाना प्रकार के अपशब्दों से त्रिसाहस्र पर्यान्त हमारे दोषों की ही चर्चा क्यों न करें फिर भी मैत्रीचित्त पूर्वक पुनः उनके गुणों का ही आख्यान करना जिनपुत्रों का अभ्यास है।।16।।

अनेक जनसमुदाय के सम्मुख कोई व्यक्ति हमारे दोषों का आख्यान करें, अपशब्दों का व्यवहार करे तो भी उसके प्रति कल्याण मित्र का भाव रखकर विनम्रता से उसका आदर करना जिनपुत्रों का अभ्यास है।।17।।

अपनी संतान के समान सस्नेह पाले हुए व्यक्ति यदि हमको दुश्मन की तरह से भी देखता है तो भी रोग से ग्रस्त पुत्र के समान, उनके प्रति अत्यधिक दयाभाव रखना जिनपुत्रों का अभ्यास है।।18।।

अपने समकक्ष या अन्य निम्न स्तर के लोगों द्वारा अहंकारवश अपमानित किए जाने पर भी अपने गुरु के समान उनके व्यवहारों को शिरोधारण करना जिनपुत्रों का अभ्यास है।।19।।

जीविका से दरिद्र हो जाए, लोगों द्वारा सदा अपमानित होता हो या घोर विघ्नों एवं रोगों से ग्रस्त हो तो भी समस्त जीवों के पापों और दुखों को अपने ऊपर लेते हुए अविचलित रहना जिनपुत्रों का अभ्यास है।।20।।

बहुजनों का सम्मान पाये और सुयशस्वी हो जाए, कुवेर के समान धनाढ्य हो जाएँ तो भी सांसारिक सम्पदा–श्री की निःसारता को देखते हुए घमण्ड न करना जिनपुत्रों का अभ्यास है।।21।।

अपने अन्दर के द्वेषरूपी शत्रु का यदि दमन न किया तो बाहरी शत्रु तो दमन करने से और फैलते जाते है।। अतएव मैत्री एवं करुणा रूपी सेना के द्वारा अपनी सन्तति का दमन करना जिनपुत्रों का अभ्यास है।।22।।

कामगुणों का सेवन नमक के पानी के समान होता है। जितना सेवन करेंगे उतनी ही तृष्णा फैलती ही जाती है। अतः जिन वस्तुओं से कामासक्ति का उदय होता है उनका तत्काल परित्याग करना जिनपुत्रों का अभ्यास है।।23।।

प्रतीयमान से सभी विषयधर्म अपने चित्त की प्रतीति मात्र ही हुआ करती हैं।चित्त स्वतः प्रपंचों की कोटियों से मुक्त है। इस तथ्य को देखते हुए सभी ग्राह्य–ग्राहक निमित्तों का मनसिकार न करना जिनपुत्रों का अभ्यास है।।24।।

मनोरम विषयों की निकटता से सुन्दरतम प्रतीतियॉ होती हैं पर वर्षाकालीन इन्द्रधनुष के समान सत्यता नहीं देखी जा सकती है। अतः कामासक्ति का त्याग करना जिनपुत्रों का अभ्यास है।।25।।

ये नाना प्रकार के दुख, स्वप्न में पुत्र की मृत्यु के ही समान है।।
भ्रान्त को सत्यतः ग्रहण करते हुए परेशान रहते है।।
अतः प्रतिकूल प्रत्ययों के सम्पर्क में आते समय भ्रान्तता का दर्शन करना जिनपुत्रों का अभ्यास है।।26।।

बोधि के इच्छुक लोगों को शरीर तक का त्याग करना पड़ता है, ऐसी स्थिति में बाह्य वस्तुओं के त्याग का तो कहना ही क्या है अतः प्रत्युपकार एवं सुख फल की बिना प्रत्याशा के दान देना जिनपुत्रों का अभ्यास है।।27।।

शील के अभाव में स्वार्थ की सिद्धि भी नहीं होती है। परार्थ साधने की इच्छा हास्यास्पद् हो जाती है। अतएव भव–छन्द से विमुक्त शील का पालन करना जिनपुत्रों का अभ्यास है।।28।।

कुशल सम्पत्ति के अर्थ जिन पुत्रों के लिए सभी प्रकार के बाधक रत्ननिधि के समान होते हैं इसलिए सभी प्रतिकूल प्रत्ययों के प्रति बिना वैर के क्षान्ति की भावना करना जिनपुत्रों का अभ्यास है।।29।।

अपने निर्माण मात्र की आशा रखने वाले श्रावक एवं प्रत्येकबुद्ध भी सिर में आग लगने पर जैसे प्रतिक्रियाएँ होती हैं उसी प्रकार से उद्यम से युक्त देखे जाते हैं, फिर जीवमात्र के हित के अर्थ गुणों का आकार वीर्य आरम्भ करना जिनपुत्रों का अभ्यास है।।30।।

शमथ से सम्प्रयुक्त विपश्यना के द्वारा ही क्लेशों का प्रहाण होता है। इसी को ध्यान में रखकर चार रूपी और अरूपी ध्यानों से अतीत–ध्यान की भावना करना जिनपुत्रों का अभ्यास है।।31।।

प्रज्ञा के बिना अन्य पॉच पारमिताओं से बोधि की प्राप्ति नहीं होती। अतएव उपाय से युक्त त्रिकोटिक कल्पनाओं से रहित प्रज्ञा की भावना करना जिनपुत्रों का अभ्यास है।।32।।

अपनी भ्रान्ति प्रवृत्तियों की परीक्षा स्वयं न की जाए तो धर्म के वेश में अधर्म का कार्य होने की सम्भावना रहती है। अतः सदा अपनी भ्रान्तवृत्तियों का परीक्षण एवं प्रहाण करना जिनपुत्रों का अभ्यास है।।33।।

क्लेश वश इतरजिन पुत्रों के दोषों की उद्भावना करने से अपनी ही हानि होती है।अतएव महायान में प्रविष्ठ पुद्गलों के दोषों का उद्भावना न करना जिनपुत्रों का अभ्यास है।।34।।

लाभ–सत्कार के कारण परस्पर विवाद होता है,श्रवण, मनन और भावना सम्बन्धी कार्यों की हानि होती है। अतः दायकों एवं मित्रों के घर के प्रति आसक्ति त्यागना जिनपुत्रों का अभ्यास है।।35।।

कटुवचन से दूसरों का मन विक्षुप्त हो जाता है, जिनपुत्रों के शील एवं चरित्र का पतन हो जाता है अतएव लोगों के प्रति अमनोज्ञ एवं कटु–वचन को त्यागना जिनपुत्रों का अभ्यास है।।36।।

क्लेशों के अभ्यास होने पर प्रतिपक्षों द्वारा प्रहाण करना दुष्कर हो जाता है। अतः स्मृति एवं सम्प्रजन्य रूपी वीर पुरुषों को प्रतिपक्षरूपी शस्त्र ग्रहण कराकर रागादि क्लेशों को प्रथमतया उभरते ही नष्ट कर देना जिनपुत्रों का अभ्यास है।।37।।

सेक्षेप में,जहॉ भी चारिका करें अपने चित्त की अवस्था कैसी है इसका स्मरण रखते हुए सम्प्रजन्य से युक्त होकर सदा परार्थ की ही साधना करना जिनपुत्रों का अभ्यास है।।38।।

इस प्रकार उद्यमपूर्वक साधित सभी पुण्यों को त्रिकोटि परिशुद्ध प्रज्ञा के द्वारा अनन्त जीवमात्र के दुख निवारणार्थ तथा सम्बाधि में परिणामित करना जिनपुत्रों का अभ्यास है।।39।।

सन्तों के वचनों का अनुसरण करते हुए,सूत्रों, तंत्रों एवं शास्त्रों में उक्त विषयों को लेकर जिन पुत्रों के सैंतीस अभ्यास के रूप में प्रयुक्त किया गया है। जिन पुत्रों के मार्ग के शिक्षार्थियों के लिए है।।40।।

मृदु मति एवं अल्प अभ्यास के कारण मेरी इस रचना में यद्यपि पण्डित जनों को आनन्दित करने वाली छन्दादि संग्रथन कारिता तो नहीं है। सूत्रों और सन्तों के वचनों पर आधारित होने से मैं इन्हें जिन पुत्रों का अविपरीत अभ्यास ही समझता हूँ।।41।।

तथापित जिन पुत्रों की चारिकाओं की विशाल थाह पाना मेरे जैसे अल्पमति के लिए दुष्कर है अतः इस रचना में शास्त्र विरुद्ध एवं असम्बद्धादि दोष सम्भव है।।
उन दोष समूह के लिए सन्त–जनों से क्षमा प्रार्थी हूँ।।42।।

इस कार्य के द्वारा अर्जित पुण्य से सभी जीवमात्र की सन्तति में परमार्थ एवं सम्वृति परमबोधिचित्तों का उत्पाद हो जिससे इस सब का भवान्त एवं शमान्त में अप्रतिष्ठत नाथ अवलोकितेश्वर के समान पद प्राप्त हों।।43।।

इस ग्रंथ की रचना युक्ति–आगमवादी श्रमण असंग ने स्व एवं पर के हितार्थ–द्डुल–छु–रिन्–छेन्–फुग् नामक स्थान पर की है।

।।शुभमस्तु सर्वजगतम्।।